भारत में साहित्य की दशा और दिशा

बजरंगलाल

साहित्य समाज का दर्पण होता है। यदि साहित्य में कोई विकृति दिख रही है, तो वह समाज की विकृति है, साहित्य की नहीं क्योंकि साहित्य तो समाज के चेहरे को स्पष्ट करने वाला दर्पण मात्र है। दूसरी ओर ऐसा भी माना जाता है कि साहित्य ही समाज का स्वरूप निर्माण करता है। साहित्य वह कारीगर है जो मूर्ति को निरंतर कांट छांट कर उसे समझने योग्य स्वरूप देने में लगा रहता है। इन दोनों ही सिद्धान्तों की मान्यता है भले ही इनके अर्थ भिन्न भिन्न ही क्यों न हो।

साहित्य और विचार एक दूसरे के पूरक होते है। एक के अभाव में दूसरे की शक्ति का प्रभाव नही होता। विचार तत्व होता है, मंथन का परिणाम होता है, मस्तिष्क ग्राह्य होता हैं, साहित्य विचारक के निष्कर्षो को आधार बनाता है, मंथन का अभाव होता है, हृदय ग्राह्य होता है, कला प्रधान होता है। विचार घी है तो साहित्य मठा। विचार लंगडा है और साहित्य अधा। बिना साहित्य के विचार की स्थिति एक वस्त्रहीन नारी के समान है और बिना साहित्य के विचार के साहित्य वस्त्रांलकृत मट्टी की मूर्ति। दोनों का प्रभाव एक साथ जोड़कर ही हो सकता है। कुछ अपवांदों को छोड़ दें तो विचार और साहित्य किसी एक ही ब्यक्ति में नहीं पाया जाता। विचाराकों द्वारा गंभीर विचार मंथन के बाद निकाले हुये निष्कर्ष को समाज तक पहुॅचाने का दायित्व साहित्यकार का हैं। इस तरह विचार फल का बीज है और साहित्य पेंड़। साहित्य अपने परिणाम समाज में इस प्रकार देता है कि वह परिणाम अन्त में विचार तक पहुॅच जावे। न तो साहित्य के अभाव में विचारक का विचार समाज तक पहुॅच पाता है न ही विचारों के अभाव में साहित्य अन्त में समाज में विचार का स्वरूप ग्रहण कर पाता है।

वर्तमान समय में सम्पूर्ण भारत में सभी सामाजिक इकाइयों का अधः पतन हुआ है। साहित्य भी इस पतन से अछूता नहीं है। साहित्य में भी वैसी ही गिरावट आई है। आदर्श स्थिति वह होती है जब विचारक और साहित्यकार दोनो ही स्वतंत्र हों। बीच की स्थिति वह होती है जब विचारक और साहित्यकार दोनो ही किसी निश्चित विचारधारा के प्रति प्रतिबद्ध हों और सबसे खराब स्थिति वह है जब साहित्यकार चारण या भाट के रूप में गुणगान पर उतर जावे। वर्तमान समय में समाज में विचारको का अभाव हो गया है। मंथन प्रक्रिया मृतप्राय है। निष्कर्ष नहीं निकल रहे है। राजनेता ही विचारक बन बैठें है। राजनेता जो निष्कर्ष निकालते है। वही साहित्यकार के लिये विचार बन जाता है और साहित्यकार उसे निष्कर्ष मानकर पूरी ईमानदारी से समाज तक पहुॅचा देता है। उक्त विचार न तो निष्कर्ष होता है न ही मंथन प्रक्रिया होती है अतः राजनेताओं द्वारा निकाले गये निष्कर्ष साहित्कारों द्वारा समाज तक पहुॅचने के बाद भी परिणाम शून्य होत है। राजनेता दिल्ली से दहेजचिल्लाते है तो साहित्यकार भी दहेज ही दहेज को समस्या के रूप में समाज के समक्ष प्रस्तुत कर देते है। जब राजनेता महंगाई, गरीबी, महिला अत्याचार, का हल्ला करते हैं तब भी साहित्कार इन मुद्दो को समाज तक पहुॅचाने में देर नहीं करता जबकि समाजिक समस्या अनुसंधान केन्द्र द्वारा 25 वर्षो तक विचार मंथन के बाद पाया गया कि मंहगाई, गरीबी, महिला अत्याचार दहेज, शिक्षित बेरोजगारी जैसी समस्यांए पूरी तरह अस्तित्वहीन है किन्तु साहित्य ने उसे इस तरह समाज के समक्ष प्रस्तुत किया है कि पूरा समाज इन अस्तित्वहीन समस्याओं से भी स्वयं को पीड़ित करता है दोष तो विचारको के अभाव का है कि उनके अभाव में राजनेता ही विचारक बन बैठे है।

तीसरे तरह के साहित्कार भी समाज की समस्याएॅ नहीं है क्योंकि सब लोग उन्हें व्यक्तिपूजक जानते है और मानते है। ऐसे लोगों की गिनती भाट से अधिक नहीं होती किन्तु दुसरे तरह के साहित्यकार बहुत घातक प्रभाव छोड़ रहे है। ये लोग स्वतंत्र न होकर किसी विचार धारा के प्रति प्रतिबद्ध होते है। स्वतंत्र साहित्कार किसी से बंधा नहीं होता किन्तु ये लोग पूरी तरह बंधे होते है। इन प्रतिबद्ध साहित्कारों में कई लोग मूल रूप से साहित्यकार नहीं होते बल्कि संस्थाएं ऐसे लोगों की पहचान करके उन्हें दीक्षित करती है और धीरे धीरे साहित्य के क्षेत्र में स्थापित कर देती है। ये लोग साहित्य के लिए विचारों का चयन नहीं कर पाते बल्कि साहित्य की विधा का अपने लिए उपयोग करते है। प्राचीनकाल में ऐसी समस्या यदा कदा ही होती थी किन्तु वामपंथ ने इसका भरपूर उपयोग किया। वामपंथ ने साहित्यकारों का एक अलग वर्ग बना दिया जिसने प्रगतिशील या जनवादी जैसे नामों से साहित्यकारों के गुट खड़े कर लिए। साहित्यकार की स्वतंत्रता पूरी तरह प्रतिबद्ध हो गई। इन साहित्यकारों ने ऐसा ताना बाना बुना कि धर्मनिरपेक्षता, अमेरिका विरोध आदि विचार इनके बंधक बन गये। ये वामपंथी साहित्यकार धीरे–धीरे साहित्य पर इस तरह छा गये कि स्वतंत्र साहित्य तो दिखना ही बंद हो गया और धीरे–धीरे दक्षिणपंथी साहित्कारों ने भी वही मार्ग चुना है अब संस्कृति और राष्ट्रीयता शब्द इनके गुलाम बन रहे

है। किसी भी बात को किसी भी तरह तोड़ मरोड़ कर संघ परिवार के पक्ष में स्थापित करना इनकी साहित्यकला मानी जा रही है। भारत का साहित्यिक परिवेश दो विचारधाराओं के साहित्य युद्ध में फंस गया है। अब तक जिस तरह साहित्य पर वामपंथियो का कब्जा रहा और अब जिस तरीके से महास्वेता देवी को चुनाव में हराकर नारंगजी के माध्यम से दक्षिणपंथयों ने कब्जा किया व साहित्य के लिए शुभ लक्षण नहीं है।

स्वतंत्र साहित्यकार को किसी राजनैतिक विचारधारा मात्र का गुलाम नहीं होना चाहिये। बामपंथ पूरी तरह राजनैतिक उद्दश्यों के लिए साहित्य का उपयोग कर रहा है। दक्षिणपंथ भी अब संघ परिवार को राजनैतिक उद्देश्यों के लिये समर्पित है। नये नये शोध, नये नये निष्कर्षो को समाज तक पहुचाने के लिये स्वतंत्र साहित्यकार कहॉ मिलेंगे। क्या अब नये विचार इसलिये समाज से बाहर हो जायेगे कि उसे स्थापित करने के लिए उसके साथ प्रतिबद्ध साहित्यकारों का अभाव है। आज की जो स्थिति है इसके लिए वामपंथी दोषी है कि दक्षिणपंथी यह मेरी चिन्ता का विषय नहीं है मेरी चिन्ता तो यह है स्वतंत्रता कहा जाकर पैर जमा सकेगी।

मैं चाहता हूँ कि साहित्य समाज में विचारां का संवाहक बने और रहे किन्तु वह किसी पेशेवर दुकान का ट्रेड मार्क बनने से बचे अन्यथा साहित्य भी उसी तरह दलदल में फंस जायेगी जिस तरह धर्मनिरपेक्षता या भारतीय संस्कृति।

प्रश्नोत्तर

प्रश्नः— श्री रामनरेश कुशवाहा, जयपुर, राजस्थान आपका इराक अमेरिका सघर्ष संबंधी लेख पढ़ा। ऐसा लगा कि आप परोक्ष रूप से अमेरिका के समर्थक हैं। मैंने अनेक अच्छे–अच्छे विद्धानों के लेख पढ़े जो सभी अमेरिका विरोधी थे। संसद ने भी सर्व सम्मति से अमेरिका के विरूद्ध प्रस्ताव पारित किया। सभी सामाजिक संस्थाये पूरी तरह अमेरिका के विरूद्ध रहीं। आपने अकेले अमेरिका का समर्थन करने की कोशिश क्यों की?

उत्तरः— आपने मेरा लेख पढ़कर मुझ पर अमेरिका का पक्षधर होने का आरोप लगा दिया किन्तु आपने मेरे तर्को के विरूद्ध कोई तर्क प्रस्तुत करना उचित नहीं समझा। भारत का सबसे बड़ा दुर्भाग्य है कि यहॉ विचारों के स्थान पर भावनात्मक प्रचार को अधिक महत्व दिया जाता है। आपने अपने कथन के पक्ष में सिर्फ एक तर्क दिया कि यह बात भारत के सभी अच्छे विद्वान, सभी सांसद तथा सभी सामाजिक संस्थाऍ एक स्वर से कह रहीं हैं। मेरे विचार से पिछले पचास वर्षो से ये लोग इसी तरह गलत प्रचार कर रहें है ये लोग कभी विचार मंथन में शामिल ही नहीं होते और विचार मंथन वालों पर कुछ भी आरोप लगाया करते है। आप जरा सोचिये कि इन सबमें से किसी ने भी मेरे तर्को का उत्तर क्यों नहीं दिया ? जिस तरह आपने मेरे तटस्थ और तर्कपूर्ण विचारों को अमेरिका समर्थक कह दिया उसी तरह मैं भी आपको सद्दाम समर्थक कहूँ तो आपको कैसा लगेगा। तटस्थ विचारों में अमेरिका या सद्दाम का समर्थन कोई गाली जैसा नहीं होना चाहिये। मेरा आपसे निवेदन है कि आप अपनी इस आदत में सुधार करें।

आपने वर्तमान विद्वान , संसद तथा सामाजिक संस्थाओं के सोंच पर विश्वसनीयता की मुहर लगा दी है। पिछले पचास वर्षो में भारत में जो अव्यवस्था फैली है उसका दोषी कौन है ? क्या यही लोग नहीं है जिन्होंने विचार मंथन की प्रक्रिया को दरकिनार करके भावनाओं को उभारने का ही काम किया। मेरे विचार में इन लोगों की नीतियॉ भी गलत है और नीयत भी ठीक नहीं है। ये लोग वैचारिक रूप से अमेरिका का विरोध करें तो बहुत खुशी की बात है किन्तु ये तो पेशेवर रूप से अमेरिका विरोधी दिखने लगे हैं। मुझे विश्वास है कि जिस तरह अशोक सिंहल, प्रवीण तोगड़िया सरीखे कई लोगों के मुसलमानों के संबंध में दिये गये बयान रद्दी की टोकरी में बिना पढ़े ही डाल दिये जाते हैं। उसी तरह कहीं इनके भी अमेरिका संबंधो बयान या लेख अपठनीय स्वरूप न ग्रहण कर लें। भारत के इन तथाकथित बूद्धिजीवियों की अपेक्षा तो अमेरिका, इंग्लैंण्ड, फ्रांस , जर्मनी, इटली आदि के लोग प्रशंसनीय बुद्धिजीवी हैं जिन्होंने अपने देश की सरकारों की परवाह न करते हुए इराक पर अमेरिकी हमले का विरोध किया किन्तु पेशेवर विरोधियां की श्रेणी में नहीं गिने गये क्योंकि ये लोग गुण दोष की विवेचना के आधार पर विचार व्यक्त करते रहे।

अभी दो घटनाऍ बुद्धिजीवियों के लिये विचार की कसौटी स्वरूप रख रहा हूँ। पिछले दिनों मध्यप्रदेश सरकार ने सभी प्रकार के कृषि उपज तथा वन उपज के क्रय विक्रय पर मंडी शुल्क पचास पैसा प्रति सैकड़ा से बढ़ा कर दो रूपया कर दिया। दूसरी ओर केन्द सरकार ने टेलीफोन की दरों वृद्धि

कर दी। आपके द्वारा बताये गये सभी विद्वानों, सांसदो तथा सामाजिक संस्थाओं ने अनाज और वनोपज पर टैक्स एकदम से चार गुना करने पर चुप्पी साध ली और टेलीफोन पर मूल्य वृद्धि पर आसमान उठा लिया। यह सब एक काकस बना हुआ है जो श्रमजोवियों असंगठितों तथा गरीबों के विरूद्ध बुद्धिजीविंयों, संगठित समूहों तथा धनपतियों के षड़यंत्र के अन्तर्गत आवाज उठाता है। ये लोग भारत में बढ़ रही ग्यारह समस्याओं की अपेक्षा अमेरिका और इराक युद्ध से अधिक चिन्तित हैं। यही नाटक हमारी सरकार करती है और यही नाटक पेशेवर बुद्धिजीवी। अन्तु में मैं आपसे यही कहना चाहता हूॅ कि आप अपनी ऑखों पर लगा रंगीन चश्मा उतारकर देखने की आदत डालें। मैं अपेक्षा करूॅगा कि आप सद्दाम या अमेरिका के अन्ध समर्थन या विरोध के स्थान पर तर्क पूर्ण ढंग से मेर इराक अमेरिका सबंधी विचारों का प्रतिवाद करने की कृपा करें।

प्रश्नः– श्री गौरव रावत 16/35 आवास एवं विकास परिषद, वसुधंरा, गाजियाबाद, उ.प्र।

मै वनस्थली पब्लिक स्कूल का छात्र हूॅ। मुझे आप निम्न प्रश्नों की जानकारी देने की कृपा करें–

1. लोक स्वराज्य मंच का जन्म कब और कैसे हुआ ? यह मंच अन्य राजनैतिक दलों से भिन्न कैसे है?
2. लोक स्वराज्य मंच बनने के बाद लोगों को क्या क्या सुविधाऍ मिली ? इसका विस्तार कितने क्षेत्र में है ?
3. इस कार्य में हमारी भूमिका क्या हो सकती है ?

उत्तरः– ऐसे ही प्रश्न और भी आते रहने के कारण विस्तृत विवरण देना उचित है। बचपन से ही मेरे मन में यह खोज बनी रहती थी कि भारत की वर्तमान समस्याऍ क्या है ? क्यों है ? और कैसे दूरी होगी ? धार्मिक संस्थाऍ अथवा आध्यात्म तो इस दिशा में पूरी तरह अप्रांसंगिक दिखता था कि मेरे विचार में अध्यात्म संतोष और सुख का मार्ग तो था, टकराव टालने का भी मार्ग था किन्तु न्याय का मार्ग नहीं था। इसमें अन्याय से संघर्ष के स्थान पर पलायन अधिक महत्वपूर्ण था।

सन् सतहत्तर में जनता पार्टी शासन में सत्ता के महत्वपूर्ण पद के बाद भी जब मैं न तो कुछ कर सका और न ही भविष्य में कोई आशा ही दिखती रही तो सत्ता के माध्यम से समस्याओं के समाधान की आशा भी समाप्त हो गई। मैं पुरी तरह राजनीति से दूर होकर अनुसंधान में लग गया। 25 वर्षो तक निरंतर इसी एक कार्य में लगा रहा और करीब पचास लाख रूपया अनुसंधान में खर्च हो गया तब कुछ महत्वपूर्ण निष्कर्ष तक पहुॅच सका। चार बातें प्रमुख थी–

(क)– भारत में ग्यारह समस्याएं निरन्तर बढ़ रही है 1. चोरी , डकैती, लूट, 2. बलात्कार 3. मिलावट 4. जालसाजी 5. आतंकवाद 6. चरित्रपतन, 7. साम्प्रदायिकता 8. जातीवाद 9. श्रमशोषण 10. आर्थिक असमानता 11. भ्रष्टाचार। अन्य जो समस्याएं दिख रही हैं वे या तो समस्या नहीं है या मामूली है।

(ख)– भारत की वर्तमान व्यवस्था पर बुद्धिजीवियों, पूॅजीपतियों तथा धुर्तो का एक ऐसा त्रिगुट चक्र रूप में स्थापित है जिसकी सारी योजनाऍ श्रम जीवियों, धन हिनों तथा सरीफों के शोषण में सहायक होती है अथवा उन्हें धोखे में रखती है।

(ग)– भारत में समस्याओं के समाधान के अबतक जो भी प्रयत्न हुये या हो रहे है वे सभी या तो समस्याओं को बढ़ाने वाले है अथवा समस्याओं पर से ध्यान हटाने वाले।

(घ)– भारत की वर्तमान समस्याओं के समाधान के लिए हमें पूरो व्यवस्था में आमूल परिवर्तन करना होगा।

चार नवम्बर निन्यानवे को अन्तिम निष्कर्ष पर पहुॅचने के बाद सबकी राय हुई की पूरे देश में यह विचार प्रस्तुत करने के पूर्व इस पर स्थानीय प्रयोग किया जाये रामानुंजगंज शहर का नगर पंचायत अध्यक्ष चुनकर मुझे प्रयोग का दायित्व सौपा गया।दो वर्षो में ही लोक स्वराज्य प्रणाली के चमत्कारिक परिणाम दिखे। विकास , अपराध नियंत्रण आर्थिक सोंच पूरी तरह बदल गई। तब दो हजार दो में इस प्रणाली के पक्ष में पूरे भारत में जनमत जागरण की योजना बनी यहीं से लोग स्वराज्य मंच का प्रारंभ है। इसका स्वरूप संपूर्ण भारत में एक साथ बन रहा है। मंच की राष्ट्रीय कार्यकारणी का

प्रथम सम्मेलन सेवाग्राम महाराष्ट्र में मार्च में सम्पन्न हुआ जिसमें भविष्य की कार्ययोजना भी बनी सम्मेलन यह घोषित और प्रमाणित किया गया की भारत की सभी प्रमुख समस्याओं का समाधान सिर्फ लोक स्वराज्य मंच के द्वारा बताये मार्ग से ही संभव है इस सम्मेलन ने निराशा के बादल हटाये हैं। वहॉ यह घोषित किया गया की यदि किसी अन्य संगठन के पास समस्याओं का कोई और अच्छा समाधान हो तो हम उसके आमंत्रण पर जहॉ चाहे वहॉ आकर विचार मंथन आयोजित करने की चनौती देते है क्योंकि हम पूरी तरह आस्वस्थ है कि वर्तमान परिस्थितियों में अन्य कोई मार्ग हैं ही नहीं।

सेवाग्राम सम्मेलन में उक्त घोषणा के बाद हमारी जिम्मेदारियॉ भी बढ़ी है। आप सबकी सहायता की आवश्यकता है। इतना बढ़ा भारत और उसकी इतनी समस्याएँ सबसे दिक्कत यह है की भारत का आम नागरिक वर्तमान व्यवस्था के दुष्प्रचार से पूरी तरह प्रभावित है ऐसे में हमारी आवाज नक्कार खानें में तूती से अधिक नहीं किन्तु इतना विश्वास है कि तूती की आवाज सही दिशा में है और व्यापक प्रभाव वाली है। जो लाग इस कार्य हमारी सहायता करना चाहते है वे मेरे सेवाग्राम के बयालीस घण्टे के भाषण के तीन घण्टे के संक्षिप्त सार संक्षेप के टेप का केसेट मंगाकर सुने और साथियों, परिजनों या आमजनों को सुनावें। जनवरी दो हजार चार से पूरे भारत में तीन तीन दिन के चालीस शिविर होंगे उसमें आपका यह प्रयत्न सहायक होगा आप और अधिक कर सकें तो हमारा साहित्य मंगाकर पढ़ सकते है। टेप या साहित्य का मूल्य लागत के बिल्कुल बराबर है जिसे आप जनवरी शिविर में वापस करके पूरा मूल्य ले सकते है जो लोग स्वराज्य मंच के सक्रीय सदस्य है या बनना चाहते है वे अपने गॉव, ब्लाक, जिला या प्रदेश के जैसी उनकी क्षमता हो, दस लोगों को सक्रियता हेतु सहमत करके नाम हमें लिख भेंजे। पहले वर्ष में हमें विचार मंथन पर सर्वाधिक ध्यान देना है। आशा है कि आपको अपने प्रश्न का उत्तर इसी में मिल गया होगा।

घ प्रश्नः– श्री महेन्द्र प्रताप सिंह राय बरेली उत्तर प्रदेश। आप ज्ञान तत्व भेजते है। मैं इसे पूरा का पूरा पढ़ता हूँ और अनेक पत्रिकाएँ आती है पर पढ़ नहीं पाता। किन्तु आपके विचार पढ़ने की इच्छा बनी रहती है। आप गंभीर से गंभीर मुद्दो पर बहुत ही सहज भाव से कुछ ऐसा लिखते है की वर्तमान स्थापित सभी विचार बौने और गलत दिखने लगते है। आपने अमेरिका और इराक पर सबसे अलग हटकर जो कुछ लिखा वह पूरी तरह सत्य है मेरे सरीखे और भी अनेक लोग ऐसा सोचते तो थे किन्तु बोलने या लिखने में डर लगता था कि कहीं कोई हमें मुसलमान विरोधी या अमेरिका समर्थक न कह दे आज कल परोक्ष रूप में अमेरिका का पिच्छ लग्गू बनना और प्रयक्ष रूप से उसे गाली देना फैशन सरीखा बन चुका है।

मैं आपसे यह जानना चाहता हूँ कि संगठन और गिरोह में क्या अंतर है ? संगठन में शामिल होना कितना उचित है और कितना अनुचित ?

उत्तरः– आपने मेरे विचारों का समर्थन किया यह मेर लिए उत्साह वर्धक है। आपने संगठन और गिरोह का अंतर जानना चाहा है। मैं इस संबंध में कुछ विस्तृत विवेचना प्रस्तुत करता हूँ।

तीन शब्द है संस्था, संगठन, गिरोह। तीनों के कार्य भी भिन्न होते है और संरचना भी संस्था व्यक्तियों के उस समूह को कहते है जो कर्तव्य करते है, अधिकारों की कोई चिन्ता नहीं करते। इनमें नया भावना प्रबल होती है अपनत्व न्याय के समक्ष गौंण हो जाता है संस्थाएँ दसरों की समस्याओं का समाधान करती है, अपना नहीं। संगठन ऐसे व्यक्तियों का समूह होता है जो अधिकारों की चिन्ता करता है, कर्तव्य की नहीं। इनमें अपनत्व भावना प्रबल होती है, न्याय अपनत्व के समक्ष गौण हो जाता है। संगठन सिर्फ अपनी समस्याओं का समाधान करता है भले ही दूसरों के समक्ष समस्याएं पैदा ही क्यों न हो जावें। गिरोह और संगठन में अनेक गण समान हाते है किन्तु एक महत्वपूर्ण फर्क होता है कि गिरोह अपराध करमों का सहारा लेता है और संगठन अपराध कर्म नहीं करता, सिर्फ शोषण करता है। गिरोह अवैधानिक तरीके से लूट पाट करते है और संगठन सवैधानिक तरीके से शोंषण करते है संस्था सेवा भाव के उद्देश्य स बनाई जाती है और सेवा कार्य ही किया करती है। संगठन मजबूतों से सुरक्षा के उद्देश्य से बनाया जाता है और कमजोरों का शोषण करता है। गिरोह शोषण के उद्देश्य से बनाया जाता है और आक्रमण का कार्य करता है।

जब व्यवस्था ठीक हो आम लोगा को स्वाभाविक रूप से या वैधानिक रूप से न्याय मिलता हो तब संगठन या गिरोह न बनते है, न उनकी आवश्यकता है। किन्तु जब स्वाभाविक या वैधानिक रूप से न्याय नहीं मिलता और व्यवस्था छिन्न भिन्न हो जाती है। तब संगठित होने की आवश्यकता महसूस होती है। ऐसे समय में संगठन बनने लगते है तथा आपस में छिना झपटी शुरू हो जाती है। ऐसी अव्यवस्था का लाभ उठाकर धीरे धीरे या गिरोह बनना शुरू कर देते है या संगठन ही गिरोह का रूप ले लेते है। ऐसे समय में जो असंगठित होता है वह पूरी तरह लूट पिट जाता है। संगठनों के माध्यम से इस सोमा तक लाभ होता ह कि अच्छे लोग अनेक अनेक संगठनों में शामिल हो जाते है बाद में तो कई लोग भी गिरोंहों के बंधुआ सरीखे हो जाते है। भारत की वर्तमान स्थिति कुछ इसी तरह की है।

गिरोह बनाना या शामिल होना तो पूरी तरह तीन नंबर का काम है। किन्तु संगठन बनाना या शामिल होना अच्छा काम न होते हुए भी मजबूरी है। या तो हम भी संगठन में शामिल होकर वैधानिक लूटपाट में शामिल हो जावे अन्यथा हम अन्य संगठनों या गिरोंहों द्वारा लूट लिए जाएगें अतः हमें बहुत विचार करके नोति बनाी चाहिये।

हमें प्रयास करना चाहिए कि व्यवस्था पूरो तरह बदल जावे। व्यवस्था द्वारा सुरक्षा और न्याय की ऐसी व्यवस्था हो की संगठन बनाने की आवश्यकता ही न हो। किन्तु यह तो बहुत बड़ा काम है। अतः तब तक के लिए विरोध से सबको संगठित हो जाना चाहिये। ऐसे संगठन की शुरूआत आप स्वयं भी कर सकते है अथवा ऐसे संगठन म शामिल हो सकते है। ऐसा प्रयत्न करना सबसे अच्छा मार्ग है। धर्म जाति, भाषा, क्षेत्रीयता, उम्र, लिंग, आर्थिक स्थति के आधार पर बनने वाले किसी संगठन में हिस्सा लेना उचित नहीं। फिर भी यदि बहुत ही आवश्यक हो तो ऐसे संगठनों की सदस्यता स्वीकार कर सकते है किन्तु बढ़ चढ़कर भाग लेना ठीक नहीं क्यों कि यह संगठन अन्त में तो असंगठितों का शोषण मात्र ही करते है। गिरोह बनाना या शामिल होना तो बिल्कुल ही गलत है।

अपराधियों के विरूद्ध संगठित होने में एक बड़ी बाधा आती है अपराधों की परिभाषा। अपराध पूरी दुनियॉ मं सिर्फ पॉच ही होते हैं–1. चोरी डकैती लूट, 2. बलात्कार 3. दादागिरी, आतंक, 4. मिलावट 5. जालसाजी, धोखाधड़ी। इन सबकी कुल संख्या आबादी की दो ढाई प्रतिशत होती है। किन्तु धुर्त लोग अपराधों की विकृत परिभाषा बनाकर हमें भ्रमित कर देते है। वें गैर कानूनो कार्यो को भी अपराध कहना शुरू कर देते है। इससे जुआ, शराब, गांजा, ब्लैक, वैश्यावृति, छुआछूत, दहेज, तस्करी, आदि हजारों गैर कानूनी कार्य अपराधों में शामिल होकर वास्तविक पॉच अपराधों की पहचान धूमिल कर देंते हैं। अब हमें भारत में निन्यानवे प्रतिशत लोग अपराधी ही अपराधी दिखने लगते है। अपराधों के विरूद्ध संगठित होन में यह सबसे बड़ी बाधा है। आपको बहुत बुद्धिमानी पूर्वक हमारे भोले भाले अल्प बुद्धि लोगों को धुर्तो की इस चाल से बचाना होगा। हम लोगों ने अपने शहर में एक उपाय किया। पॉच प्रकार के अपराधों को तीन नम्बर और अन्य गैर कान्नी कार्यो को दो नम्बर कहा जाने लगा। इससे हमें अपराधां के कानूनी से पृथक करने में बहुत सहायता हुई इसी से हम अपराधियों के विरूद्ध संगठन बनाने में भी सफल हुये आप ही ऐसा कर सकते है। आप पूरी तरह यह समझ लें कि जो लोग जुऑ , शराब, गांजा, भांग, छुआछूत, वैश्यावृत्ति, टैक्स चोरी, तश्करी, ब्लैक, दहेज, वन अपराध आदि को अपराधों के साथ जोड़कर देखते है तथा अपराधों के समान उन्हें कानून के द्वारा रोकने के पक्षधर है वे लोग या तो नासमझ हैं या धूर्त। ये या तो दया और ज्ञान के पात्र है अथवा सजा के। संगठन बनाने के पूर्व इनकी सतर्कता आवश्यक है। इस पर संगठन बनाने को सीधा सीधा न तो उचित कहा जा सकता है न ही अनुचित क्योंकि वर्तमान अव्यवस्था के निराशाजनक वातावरण में गिरोह के रूप में संगठित अपराधियों के विरूद्ध संगठित प्रतिरोध की योजना बनाना ही तात्कालिन मार्ग हैं। जब वर्तमान व्यवस्था पूरी तरह बदल जायेगी तब एसी आवश्यकता भी नहीं रहेगी।

असली नकली चेहरे

दृश्य एक

12/1/65 च प्रश्न स्थानीय स्तर पर अपराधियों के

रमेश– आजकल अमेरिका भारत पाकिस्तान के आन्तरिक मामलों में बहुत बढ़ चढ़कर बोल रहा है।

मोहन– यह बात तो सच कह रहे हो। भारत सरकार के सभी उच्च पदाधिकारियों ने अमेरिका को बार–बार यह बात समझाई है की उसे अन्य देशों के आन्तरिक मामलों दखल नहीं देना चाहिये।

रमेश– सच्चाई यह है कि पाकिस्तान अमेरिका की मध्यस्थ की भूमिका चाहता है और अमेरिका भी बिन बुलाये पंच की तरह पंचायत के लिये आतुर है। हमारे प्रधान मंत्री को आर स्पष्ट रूप से अमेरिका को कह देना चाहिये कि अमेरिका किसी भी देश के आंतरिक या द्विपक्षीय विवादों से दूर रहने की आदत डालें।

मोहन– बिल्कुल ठीक कह रहे हो, रमेश भईया। यह बात अमेरिका को बिल्कुल साफ शब्दों में बता देना चाहिये।

दृश्य दो

रमेश– आजकल अमेरिका दो मुँही बातें बोलने लगा है मोहन

मोहन– कैसे ?

रमेश– एक तरफ तो अमेरिका अन्य देशों पर दबाव बना रहा है कि वे किसी अन्य देश में आंतकवादी घुसपैठ न करें। दूसरी ओर पाकिस्तान को भारत में घुसपैठ के लिये कुछ नहीं कहता। ?

मोहन– अमेरिका को क्या करना चाहिये ?

रमेश– अमेरिका को चाहिये कि वह भारत और पाकिस्तान के बीच चल रहे इस छद्म युद्ध के बीच हस्तक्षेप करे और पाकिस्तान पर अंकुश लगावे। हमारे देश के प्रधानमंत्री सहित सभी बड़े नेताओं ने बार बार अमेरिका से कहा है कि वह हस्तक्षेप करें किन्तु वह समझता ही नहीं।

मोहन– यह बाताओं रमेश कि क्या अमेरिका को भारत और पाकिस्तान के बीच छद्म युद्ध में हस्तक्षेप करना चाहिये?

रमेश– बिल्कुल करना चाहिये। अमेरिका पाकिस्तान का दोस्त है। यदि अमेरिका उससे नही समझायेगा तो कौन समझायेगा उसे।

मोहन– और यदि पाकिस्तान भी यही चाहे कि अमेरिका कश्मीर मामलें में मध्यस्थता करे तो इसमें क्या गलत है?

रमेश– कश्मीर हमारा और पाकिस्तान का द्विपक्षीय मामला है। इसमें किसी तीसरें देश के हस्तक्षेप की कोई आवश्यकता नहीं। किन्तु कश्मीर का आतंकवाद सीधा सीधा आंतकवाद है इसमें अमेरिका को दखल देना चाहिये।

मोहन– यह तुम्हारी दो मुँही बातें है रमेश। एक तरफ तो तुम कश्मीर के मामले में अमेरिकी हस्तक्षेप के विरूद्ध लम्बी चौड़ी बातें करते हो दूसरी ओर बार बार अमेरिका से निवेदन करते हो कि वह कश्मीर के आतंकवाद के लिए हस्तक्षेप करे। तुम क्या कहना चाहते हो यह बिल्कुल स्पष्ट क्यों नहीं कहते।

रमेश– तुम नहीं समझते मोहन कि राष्ट्रहित के लिए कभी कभी ऐसी बातें करनी पड़ती है

मोहन– दुनिया सब समझती है रमेश। हमें साफ साफ बातें कहने की आदत डालनी चाहिये। दो मुँही और राजनैतिक भाषा हमें धीरे धीरे अविश्वसनीय बना देती है।

पचपन वर्षो में हमारे प्रयत्न और परिणाम

बजरंगलाल

पच्चपन वर्षो में हमने स्वतंत्र भारत में बहुत कुछ बनाया। व्यवस्था में भी हमारे लोग सक्रिय रहें और समाज में भी। किन्तु हमारे पच्च्पन वर्षो के लगातार प्रयासों के बाद भारत कैसा बना या बन रहा है यह देखने की हमें फुरसत नहीं। मैंने पिछले एक माह (मई माह) की घटनाओं का आकलन करके भारत की जो तस्वीर बनाई वह कैसे बनी, क्यों बनी, अब क्या करना चाहिये यह आपके समक्ष प्रस्तुत है। यहि तस्वीर आपके समक्ष इसलिये प्रस्तत है कि पिछले पच्चपन वर्षो से भारत की तस्वीर बनाने में हम और आप दोनों ही निरंतर लगे हुये है।

मई माह में उत्तरप्रदेश में अपराधियों ने मधुमिता की हत्या कर दी। हत्या का संदिग्ध उत्तर प्रदेश का ही एक मंत्री है हत्या में मुख्य भूमिका जिस व्यक्ति की बताई जा रही है वह पंद्रह बीस हत्या और डकैती के अपराधों में संलिप्त रहा है। वैसे भी उत्तरप्रदेश प्रदेश की सम्पूर्ण राजनीति दो ध्रुवों के इर्द गिर्द घुम रही है जिसका एक ध्रुव है मायावती और दूसरा मुलायम सिंह। पच्चपन वर्षो में हमने जो तस्वीर बनाई उसमें भारत क ह्दय प्रदेश की व्यवस्था की बाग डोर मुलायम और मायावती को सौंपकर हम भारत की तस्वीर बना रहे है।

इसी माह में बिहार में सत्ता रूढ़ लालू ने लाठी रैली निकालकर अपना शक्ति प्रदर्शन किया। रैली के नाम फैलाई गई अव्यवस्था के बहाने वहॉ के एक पूर्व विधायक की खुलेआम हत्या हो गई। हत्या करने वाले सत्ता रूढ़ दल के लोग थे। इस घटना के पंद्रह दिन बाद ही पटना के एक प्रसिद्ध डाक्टर का अपहरण कर लिया गया। अपहरण के बाद पकड़े गए लोगों ने बताया की अपहरण कराने वाला समता पार्टी का सम्मानित विधायक है। उक्त विधायक पर अब भी न्यायालय में अनेक ऐसी भी गंभीर मामले लंबित है जहॉ से उन्हें बार बार जमानत मिलती रही है। अभी मई माह पूरा होने में पॉच दिन बाकि है कि पटना के एक प्रोफेसर को गोली मार दी गई।

तमिलनाडु के डी. एम. के. के एक बड़े नेता की खुलेआम हत्या कर दी गई हत्या में पूर्व मुख्यमंत्री और डी.एम.के के प्रमुख करूणानिधि के पुत्र की गिरफ्तारी हुई

मई माह में ही पश्चिम बंगाल में पंचायत चुनाव हुए। पूरे बंगाल के चुनाव गैंग वार के रूप में सम्पन्न हुए। सत्ता की ताकत पर चुनाव जीतकर प्रजातंत्र की रक्षा की गई।

मई माह में भी छत्तीसगढ़ के सरगुजा जिले में सोनिया जी का आगमन हुआ। भीड इकट्ठी करने के लिये सम्पूर्ण सरगुजा जिले के सम्पूर्ण वाहन जगह जगह रोक दिये गये। चलती हुई बसों की सवारियां उतारकर पुलिसवाले पुलिस की वर्दी पहनकर लुटेरों के समान सभी गाड़िया ले गये। विलखते बच्चों और महिलाओं का भी ख्याल नहीं रखा गया। बताया गया की यह सब मुख्यमंत्री के आदेश से हो रहा है। सोनिया जी भीड़ देखकर बहुत पसंद हुई। हमने भी मान लिया की अब छत्तीसगढ़ भी बिहार और उत्तर प्रदेश की राह पर चलना प्रारंभ कर रहा है।

मई माह में पूरे देश में भ्रष्टाचार ने भी अपने पुराने कई रिकार्ड तोड़ डाले। शरद यादव के खाद विभाग में अरबों रूपये का चावल गायब हो गया। अब जॉच चल रही है। केन्दोय वित्त राजमंत्री जी का पी.ए. घूसखोरी में पकड़ा गया। प्राथमिक परिस्थितियॉ स्पष्ट रूप से मंत्री की ओर इशारा कर रहीं है। साम्प्रदायिकता ने जरूर इस माह में गुजरात का रिकार्ड नहीं तोड़ा लेकिन धर्म के मर्म स्थान पर पूरे मई माह में त्रिशुल अन्दर तक घुसकर जख्म करता जा रहा है

पच्चपन वर्ष पूर्व भारत को तस्वीर बदलने का दायित्व संसद पुलिस, न्यायालय, जैसी प्रशासनिक तथा आर्य समाज, सर्वोदय, गायत्री परिवार जैसी समाजिक संस्थाआं ने उठाया था। दोनों ही इकाइयॉ पूरी तरह निरतंर सक्रिय है। दोनों जनता से जो कुछ मांगा वह सब उन्हें मिला। प्रशासन को बोट और टैक्स इतना मुॅह मॉगा मिला कि आम जनता गुलाम बन गई समाजिक संस्थाओं को भी न धन की कमी रही न समान की । फिर भी हमारे भारत का यह विद्रूप चेहरा क्यों बना यह विचारणीय है। हमारे प्रयासों में कोइ कमी रही अथवा हमारे प्रयासों को दिशा ही गलत थी यह विचारणीय है।

अनेक अपराधी पच्चीस पच्चीस हत्या या डकैती के अपराधा में न्यायालय से जमानत पाकर घूम रहें है। क्या महत्व है न्यायलय की जमानत का ? भारत की न्यायपालिका पर्यावरण के प्रति इतनी संवेदनशील है कि वह विधायिका पर लोक से हटकर भी अंकुश लगाने के प्रति पूर्ण रूप से सचेष्ट है। जो न्यायपालिका पूरे भारत में किसी भी व्यक्ति के भूख से मरने की स्थति में मुख्य सचिव तक को जिम्मेदार ठहराने की चेतावनी जारी करती है वही न्यायपालिका अनेक अनेक बार न्यायलय से जमानत पा चुके और मुकदमा लड़ रहे गंभीर अपराधियों के पुनः अपराध न करने के विषय में न तो अपने दायित्वों पर कुछ विचार करती है न शासन को कोई दिशा निर्देश जारी करती है। जमानत पर छूटा हुआ अपराधी पुनः वैसा ही अपराध करे तब भी जमानत करने वाला इसलिये निर्दोष है कि न्यायालय किसी को भी गलत प्रमाणित कर दे किन्तु अवमानना के डर से उसे कोई गलत नहीं कह सकता न्यायालयां में गंभीर गंभीर अपराध कई कई वर्षो से फैसले की प्रतिक्षा में है क्योंकि न्यायालय के पास काम का बहुत बोझ है। दूसरी और न्यायालय में नब्बे प्रतिशत मुकदमें जुऑ, शराब, दहेज, गांजा, अफीम, छुआछूत, आदिवासी,आदि दो नम्बर के गैर कानूनी कार्य के है। हमारे शहर में भी पॉच बोरा अनाज रजिस्टर से अधिक होने का मामला आठ वर्षो से न्यायालय मं चल रहा है। सरकार न अब इसे कानून सम्मत भी बना दिया लेकिन चूँकि वह कार्य आठ वर्ष पूर्व गैर कानूनी था अतः ऐस ऐसे मुकदमे भी न्यायलय हटाये नहीं जा रहे भले ही इनके कारण वास्तविक अपराधों की सजा में ही क्यों न विलम्ब हो जावे। भारतीय न्यायलय अन्य मामलों में तो बहुत बाल की खाल निकालते है किन्तु अपराध और गैर कानूनी का फर्क जैसी समान्य बुद्धि की बात भी वे पच्चपन वर्षो तक नहीं समझ सकें।

पुलिस का हालचाल तो और भी खराब है। भारत में अधिकांश अपराधियों के पास अवैध शस्त्र मौजूद हैं किन्तु हमारी पुलिस बड़ी बहादुरी से अवैध गांजा के पौधे जप्त करके वाहवाही लूटती हैं। पुलिस के दायित्वों में से नब्बे प्रतिशत कार्य ऐसे हैं जिनका अपराध से कोई सम्बन्ध नहीं। पुलिस और जनता के बीच विश्वास का संकट पैदा हो गया है। क्योंकि आम नागरिकों के सामान्य जनजीवन में भी पुलिस का हस्तक्षेप है। एक अधिकृत सर्वेक्षण के अनुसार पूरे भारत को मिलाकर कुल अपराधियों का प्रतिशत डेढ़ के आसपास है किन्तु पुलिस स अंठान्वे प्रतिशत लोग डरते और चिढ़ते है क्योंकि किसी भी गैर कानूनी कार्य में वे पुलिस के फेर में पड़ सकते है। एक आंकलन के अनुसार पुलिस को सिर्फ अपराध नियंत्रण तक सीमित करके उनकी संख्या आधी भी कर दी जाये तो आसानी से अपराध नियंत्रण संभव है किन्तु उनकी संख्या दो गुनी भी करके उन्हें दहेज छुआछूत और गांजा तम्बाकू से विरत नहीं किया गया तो अपराध नियंत्रण नहीं हो सकता।

संसद का हाल तो और भी चिन्ता जनक है। अपना वेतन बढ़ाने को छोड़कर किसी मुद्दे पर गंभीर विचार विमर्ष नहीं होता। दलीय आधार पर बांटकर एक दूसरे पर दोषारोपण से आगे संसद बढ़ ही नहीं पाती। भारतीय संसद में सांसद की स्वतंत्रता को दलीय अनुशासन में इस तरह बाध दिया गया है कि वह सिर्फ निर्देशानुसार हाथ उठाने वाली मशीन तक सीमित है। भारत की संसद के लिये वह दिन दुर्भाग्य जनक था जब सांसदो की स्वतंत्रता को दलीय अनुशासन में बाधनें के लिये दलबदल कानून बना और उसे अब और कड़ा किया जा रहा है। सांसदो की खरीद बिक्री को रोकन के उद्देश्य से उसकी स्वतंत्र विचार अभिव्यक्ति पर ही रोक लगा दी गई। अब संसद में सांसदो की सशरीर उपस्थिति को हटाकर सिर्फ दलीय प्रमुख ही बैठकर चर्चा करें और उनके मत उनकी संख्या के अनुसार तय कर लें तो भी कुछ फर्क नहीं क्योंकि आस्तित्व हीन सांसद स्वयं हाथ उठाव या सबका हाथ एक आदमी उठा दें इसमें अन्तर क्या पड़ता है। संसद का यदि एक प्रतिशत समय भी गंभीरता पूर्वक अपराध नियंत्रण पर विचार में लग जाता तो हमारा उद्धार हो जाता किन्तु दिन रात बहस करने वाली संसद भी आज तक अपराध और गैर कानूनी का अन्तर तय नहीं कर सकी न ही उसकी कोई ऐसी योजना ही है।

जिस तरह हमारी न्यायपालिका, विधायिका और कार्यपालिका अपराध और गैर कानूनी का आज तक अन्तर तय नहीं कर सकी तथा अपनी प्राथमिकताए ठीक ठीक नहीं समझ सकीं उसी तरह हमारा मीडिया भी अविचारित सक्रियता में लग गया है। समाज हित को केन्द्र बिन्दु न मानकर वर्ग

विद्वेष बढ़ाने में मीडिया की पूरी भूमिका रही। मई माह में दिल्ली की निशा शर्मा के दहेज प्रकरण को जिस ढंग से मीडिया ने उठाया वह ढंग यह प्रमाणित करने के लिए पर्याप्त है कि मोडिया घटनाओं को समाज के समक्ष यथास्थिति में प्रस्तुत न करके अपनी प्रचार सामग्री के समान उपयोग करना चाहता है। मीडिया ने वर का पक्ष कभी भी समाज के समक्ष रखा ही नहीं। यह बात भी विशेष रूप से विचारणीय है कि निशा शर्मा से विवाह के लिये जब पूर्व भी अनेक लड़के बिना दहेज के तैयार थे और अब भी हैं तो उसने उतने बड़े ओर धनी परिवार को ही क्यों चुना। मीडिया वर्ग विद्वेष के विषयों को उठाने में जिस तरह अनावश्यक रूचि ले रहा है वह भी बहुत घातक है। लगता है कि मीडिया को प्रजातंत्र का चौथा स्तंम्भ कह कह कर हमन इतना महिमामंडित कर दिया कि मीडिया में अविचारित लोगों के प्रवेश की होड़ लग गई।

अब हम विचार करें सामाजिक संस्थाओं की सक्रियता पर। सामाजिक सस्थाएँ अधिकांश रूप से तो सेवा कार्य या विचार परिवर्तन को ही सब कुछ समझ रही हैं। ये सस्थाएँ व्यवस्था परिवर्तन और सेवा कार्य का कोई अन्तर समझती ही नहीं। चरित्र सुधार, पर्यावरण सुधार, नैतिकता, नशामुक्ति आदि सेवा कार्य के अन्तर्गत आते है । किन्तु इन कार्यो को व्यवस्था परिवर्तन के नाम से भ्रम वश आगे बढ़ाया जा रहा है। आज तक दुनिया में कहीं भी ऐसा हुआ ही नहीं है कि शासन अन्यायी, अत्याचारी, समाज में विद्वेष पैदा करने वाला हो और आम नागरिकों को न्यायप्रिय, सदाचारी, समाज हितैषी बनाकर शासन में सुधार हो जाय। सुव्यवस्था या अव्यवस्था में वातावरण में तो समाज सुधार के परिणाम दिख सकते हैं किन्तु कुव्यवस्था के वातावरण में समाज सुधार के परिणाम अत्याचारी शासक के सहायक होते हैं जैसा कि वर्तमान समय मे हो रहा है। मैं मानता हूँ कि सामाजिक संस्थाओं की नीयत में कोई खोट नहीं जैसा राजनेताओं या मीडिया की नोयत में है किन्तु नीयत के साथ साथ नीतियों का भी बहुत महत्व होता है। गायत्री परिवार ने तो हम सुधरेंगे जग सुधरेगा का नारा देकर हम लागों को ही ऐसा कटघरे में खड़ा कर दिया जैसे कि मई माह में हाने वाले सारे अपराधों के दोषी न राजनेता हैं न अपराधी और न मीडिया। सारे अपराधों के दोषी हम लोग ही हैं। ऐसे बे सिर पैर के नारे हमारा मनोबल भी तोड़ते हैं और भ्रमित भी करते हैं। आर्य समाज वर्तमान समय में पूरी तरह निष्क्रिय दिख रहा है। एक सर्वोदय है जो कभी व्यवस्था परिवर्तन की लाइन पकड़ता है तो कभी समाज परिवर्तन की। सर्वोदय ग्राम स्वराज्य की बात करते करते फिर बीच में इधर उधर देखना शुरू कर देता है जो व्यवस्था परिवर्तन के लिये घातक हो रहा है।

बहुत गंभीरता से विचार करने की आवश्यकता है। दुनिया में पूँजीवाद ने प्रजातंत्र का मुखौटा धारण कर लिया है। उसके विरूद्ध साम्यवाद कभी न टिक सका है न टिकेगा। सिर्फ आकर्षक नारों के आधार पर सत्ता का केन्द्रीकरण साम्यवाद का मूल मंत्र है। साम्यवाद के जनक रूस और चीन तो पूँजीवाद की ओर बढ़ गये। भारत भी निरंतर पूँजीवाद की ओर बढ़ता जा रहा है। दुनिया जानती है कि साम्यवादी नारे पूँजीवाद का मुकाबला तो कर ही नहीं सकते उल्टे पूँजीवाद को मजबूत करते है क्योंकि खोखले नारों से कुछ नहीं हो सकता। धर्मनिरपेक्षता के नाम पर तर्क हीन मुस्लिम समर्थन कि वह धर्म निरपेक्ष हिन्दुओं या इसाइयों में भी धर्म निरपेक्षता का भाव समाप्त कर दे कभी लाभ नहीं दे सकता। सारी दुनिया में प्रमाणित हो चुका है कि इस्लाम के समर्थक मुसलमानों का बहुमत सदा दोहरी नीति पर आचरण करता है अथात जहॉ वह बहुमत में होता है वहॉ धर्म निरपेक्षता का विरोध करता है और जहॉ अल्पमत में होता है वहॉ धर्मनिरपेक्षता का समथन करता है। पता नहीं हमारे धर्मनिरपेक्षों की क्या मजबूरी है कि ये ऐसे दोहरे चरित्र वालों को छोड़कर अपनी स्वतंत्र धर्मनिरपेक्ष नीति क्या नहीं बनाते है। इसी तरह साम्यवादियों के खोखले नारों के पीछे हम पूँजीवाद के विरोध में कोई विकल्प खड़ा न करके अमेंरिका विरोध तक सीमित हो जाते हैं। भारत में पिछले दिनों जिस तरह इराक पर अमेरिका आक्रमण के विरोध की चिन्ता की गई उसका शतमांश भो अपना विद्रूप चेहरा देखकर उसे ठीक करने के उपाय पर लगाते तो अधिक अच्छा होता। सारे भारत के अधिकांश बुद्धिजीवी इस तरह इराक अमेरिका युद्ध के प्रचार युद्ध में कूद पड़े जैसे भारत की सम्पूर्ण व्यवस्था परिवर्तन का रास्ता वहीं से खुलने वाला हो। मैं तो यह भी मानता ह्। कि स्वदेशी या अंत्योदय जैसे प्रयास भी न प्रजातंत्र के विकल्प बनने के लिये पर्याप्त हैं न पूँजीवाद के विकल्प के लिये। ये नारे पूँजीवाद पर तो चाट करते हैं किन्तु शासन को कमजोर नहीं करते। कुल मिलाकर हम साम्यवादी प्रचारतंत्र के शिकार हो रहे हैं।

अनुसंधान से प्रमाणित हो चुका है कि आदर्श प्रजातंत्र के वैसे ही घातक परिणाम होंगे जैसे पूँजीवादी देशों में दिख रहे हैं और विकृत प्रजातंत्र के वैसे घातक परिणाम होंगे जैसे भारत पाकिस्तान बंगलादेश जैसे देशों में दिख रहे हैं। भारत में वर्तमान समय में दो विचार धाराएँ सक्रिय है एक वह जो भारत के विकृत प्रजातंत्र के स्थान पर पश्चिम के आदर्श प्रजातंत्र का समर्थन कर रही है और दूसरी वह जो पश्चिम के आदर्श प्रजातंत्र के पूँजीवादी परिणामो का विरोध मात्र कर रही है बिना यह बताये कि उसके पास विकल्प क्या है। दोनो ही स्थितियॉ प्रतिकूल हैं। न तो पश्चिम का अन्धानुकरण ही हमारे पचपन वर्षो के बाद वर्तमान विद्रूप चेहरे को ठीक कर सकता है न ही पश्चिम का अन्ध विरोध। हमें तो स्वयं अपनी नीति बनानी होगी।

प्रश्न उठता है कि क्या हम पचपन वर्षो में ऐसे अन्धकूप में गिर गये जहॉ से निकलने का कोई मार्ग नहीं। मैंने पचीस वर्षो के अनुसंधान के बाद निष्कर्ष निकाला कि यह कार्य तो बिल्कुल आसान है। और वह मार्ग है लोक स्वराज्य प्रणाली का। शासन का हस्तक्षेप, दायित्व और अधिकार जिस भी मात्रा में कम होते जायेगे उसी मात्रा में समाज मजबूत होता जाएगा और उसी गति से हमारे चेहरे की विद्रूपता घटती चली जायगी। शासन यदि अपराध नियंत्रण के अतिरिक्त सारे कार्य परिवार और गॉव पर छोड़ दे जो आवश्यकता अनुसार जिला, प्रान्त, या राष्ट्रीय पंचायतो को दे सकते है तो न्यायलयों में भीड़ कम होने से निर्णय तत्काल होने लगेगें। पुलिस के पास काम कम होने से दुहरा लाभ होगा। पहला यह कि पुलिस अधिक तीव्र ध्यान देकर अपराधियों को पकड़ सकेगी, दूसरा यह कि पुलिस की संख्या तथा हस्तक्षेप कम होने से पुलिस की छवि अच्छी बनेगी। भ्रष्टाचार अपने आप कम हो जायगा। शासकीय हस्तक्षेप कम होने से वर्ग विद्वष भी नहीं होगा क्योंकि किसी वर्ग को प्रश्रय और दूसरे को गिराने से ही तो वर्ग संघर्ष पैदा होता है। साम्प्रदायिकता, जातिवाद, गरीब, अमीर, स्त्रीपुरूष के झगड़े स्वयमेव समाप्त हो जायंगे क्योंकि ये झगड़े तो शासन या उसके पिछलग्गुओं द्वारा ही पैदा किये जाते हैं। इस तरह भारत में व्यस्था परिवर्तन का अब तक का काम पूरा हो जायगा।

स्वामी दयानन्द ने कहा था कि परिस्थिति अनुसार ही शब्दों का अर्थ चयन करना चाहिये। आज हमारे स्वामी जी या गॉधी जी के भक्त सुपारी के पोछे पड़े हैं। मैं देख रहा हूँ कि भारत अपराधियों को दी जाने वाली सुपारी अधिक कलंक है पेड़ की खाने वाली सुपारी की अपेक्षा। किन्तु हम स्वामी दयानन्द और गांधी के चेले अपराधियों के बीच प्रयुक्त सुपारी से तो शर्म महसूस नहीं करते और गुटखा के विरूद्ध आंदोलन करते हैं। भारत की सम्पूर्ण वयवस्था को बदलना बिल्कुल कठिन नहीं। यदि आर्य समाज और सर्वोदय, मात्र दो संस्थाओं के कुछ लोग गंभीरता पूर्वक विचार करके अपनी प्राथमिकताएँ निर्धारित कर लें तो यह कार्य बिल्कुल कठिन नहीं। जो लोग पचपन वर्षो से निष्क्रिय है वे कटघरे में नहीं खड़े है, जो राजनेता या व्यवस्था से जुड़े लोग शोषण में लगे है वे भी पूछने योग्य नहीं। भारत के विद्रूप चेहरे का वास्तविक उत्तर तो सिर्फ उन्हें ही देना है जो पिछले पचास वर्षो से भारत की एक साफ सुथरी छवि बनाने में पूरी ईमानदारी से निरंतर सक्रियता से लगे है और मई दो हजार तीन तक भारत का ऐसा विद्रूप चेहरा हो चुका है कि एक सर्वेक्षण के अनुसार स्वतंत्रता के समय के भारत और मई दो हजार तीन के भारत के तुलनात्मक अध्ययन में भारत में अपराधियों के मन में शासन से भय नौ प्रतिशत से घटकर दो प्रतिशत रह गया है दूसरी ओर कानून का पालन करने वालों के मन में शासन का भय सत्तर प्रतिशत से बढ़कर चौरान्नवे प्रतिशत हो गया है। इसके ठीक विपरीत अपराधियों का शासन और समाज पर विश्वास तीव्र गति से बढ़ा है और कानून का पालन करने वालों का शासन और समाज पर विश्वास तीव्र गति से घटा है। यह हम और आप सबके लिये चिन्ता, चिन्तन और शर्म का विषय है। आप वर्तमान में जो कुछ भी कर रहे हैं वहीं एक क्षण के लिये रूक जाइये और विचार करिये कि कहीं न्याय की आवाज समाज व्यवस्था को कमजोर तो नहीं कर रहीं है ? कहीं आपके द्वारा पल्लवित पोषित संगठन असंगठितों का शोषण तो नहीं कर रहा है ? कहीं आपके प्रयत्न समाज में धर्म, जाति, भाषा , क्षेत्रीयता, उम्र, लिंग और आर्थिक स्थिति के आधार पर न्याय की आवाज के बदले ऐसे वर्ग संघर्ष को तो हवा नहीं दे रहे हैं जो समाज में हिंसा, अपराध, मिलावट घूर्तता और बलात्कार करने वाले अपराधियों के छिपने अड्डे बन जावें ? भारत में अपराधों के निरतर बढ़ते ग्राफ से हुए समाज के विद्रूप चेहरे में अपने पचपन वर्षो के प्रयत्नों की निरर्थक और असफल भूमिका के परिपेक्ष्य में कुछ क्षण रूककर सोचिये और यदि आपने थोड़ी देर भी रूककर सोचने का कष्ट किया तो

सच्चाइ बिल्कुल स्पष्ट दिखने लगेगी और तब आपके मन में भी व्यवस्था परिवर्तन के प्रयासों की वैसी ही आग उठ सकती है जिस आग में मैं झुलस रहा हूँ। आशा है कि आप भविष्य में कुछ करने के पूर्व कुछ क्षण रूककर कुछ समीक्षा करने का प्रयास करेंगे।

साम्प्रदायिकता किसी की भी हो, टूटता तो देश ही है

चन्द्रशेखर धर्माधिकारी

दिल्लो की एक सभा में मौलाना बुखारी ने ऐलान किया है कि मुसलमानों का अलग तथा स्वतंत्र राजनैतिक पक्ष होना चाहिए। मौलाना साहब का यह आरोप था कि इस देश के सारे राजनैतिक पक्ष मुसलमानों के हितों की हिफाजत करने में नाकामयाब रहे हैं। इस ऐलान पर गंभीरतापूर्वक विचार करने की जरूरत है।

लगता है कि उनका यह आव्हान सीधा और केवल प्रतिक्रियात्कम नहीं है। इसके पीछे एक मानसिकता छिपी हुई है जो 'द्विराष्ट्रीय' तथा 'पाकिस्तानी' प्रवृति की घोतक बन सकती है। सारे राजनीतिक पक्ष हिन्दुओं के हित में काम कर रहे हैं, ऐसी भावना इसमें गर्भित है और कथित 'सेक्यूलर' या धर्मनिरपेक्ष राजनीतिक पक्ष सिर्फ 'वोट बैंक' मानकर मुसलमानों का तुष्टीकरण करते हैं, यह शिकायत है। उनकी नीयत पर मौलाना साहब को शक है विश्व हिन्दु परिषद सिर्फ हिन्दुओं की बात करती है, इसीलिए मुसलमानों की बात करने के लिए, उनके हित की हिफाजत के लिए, अलग राजनीति पक्ष चाहिए, यह भूमिका है। इसे 'पाकिस्तान' या 'पुण्यभू' की प्रवृति माना जा सकता है, जो देश का धर्म के नाम पर विभाजन करना चाहती है। ऐसी राजनीतिक पार्टियां मुल्ला–मौलव शाही, एकाधिकारीशाही को ही होगी, जो वृति में धर्मान्ध होंगी। जिन्ना साहब ने, दो धर्मो के लोग साथ नहीं रह सकते, इसलिए 'पाकिस्तान' की मांग की थी। उसी के उत्तर में 'हिन्दुस्तान हिन्दुओं का' – इस भावना को मुखर करने के लिए 'पुण्यभूमि' की माग सामने आयी।

लोग कहते हैं कि धर्म इन्सान को 'आईटेंन्टीयेयानो' पहचान देता है। यह एक मोठी गलतफहमी है। मैं हिन्दु हूँ इतना कहकर काम नहीं चलता, पूछने वाला पूछता है कि महाराष्ट्रीयन हिन्दु है क्या ? इसके उत्तर से भी प्रश्नकर्त्ता का समाधान नहीं होता, इसलिए वह देशस्य है, कोकणस्थ है या कायस्थ यह पूछता ही है। आगे वह गोत्र, प्रवर तक जानना चाहता है। यह बात मुसलमानों की भी है। सिर्फ मुसलमान होना काफी नहीं हैं, पहचान के लिए शिया या शुत्री हैं, यह जरूरी हो जाता है और यह प्रश्नावली आगे बढ़कर जाति और पारिवारिक विशेषता तक पहुचती है। हिन्दुओं में 'धर्म' कल्पना है जाति ही 'वास्तव' ह, जो उपजातियों में बिखरी हुई है। यही स्थिति मुसलमानों और ईसाइयों की भी है। महाराष्ट्र के कोंकण में शादी के इश्तहार में कोंकणस्थ ब्राहम्ण क्रिश्चियन वधु चाहिए लिखा जाता है।

इस फिरकापरस्ती से भारतीयता या राष्ट्रीयता के टुकड़े टुकड़े हो जाते हैं आर यही खतरा बुखारी जी के ऐलान के पीछे है। धर्म के नाम पर विभाजन हुआ, पाकिस्तान बना तो धर्मान्ध हिन्दु कहते हैं, अब तो बचा है वह 'हिन्दुराष्ट्र' बनना चाहिए। इसी कारण हिन्दुत्ववादी संस्थाओं की संख्या बढ़ रही है और हिन्दुत्व ही राष्ट्रयत्व है, यह नारा बना है। लेकिन दोनों की बात स्पष्ट है कि भारतीय राष्ट्रीयता में या धर्मनिरपेक्षता और सर्वधर्म समभाव में दोनों का विश्वास नहीं है। एक ही राष्ट्र की सीमाओं में दोनों धर्मो के आधार पर राजनीतिक पक्ष या दो अलग राष्ट्र चाहते हैं। इसे ही व्यवच्छंदक अलगाववाद कहते है। यह धोखे की घन्टी है। जितने धर्म, उतनी राजनीतिक पार्टियां, उतने राज्य, यह होगी तो उसी में – से जितनी जातियां उतने पक्ष, उतने राज्य बने, यह मांग भी आगे आएगी। हम सिर्फ धर्म मानते है, उस धर्म के लोग जहां रहते हैं वही हमारा देश है, राष्ट्र है यह उसकी परिणति हागी। राष्ट्र भावना से जात–जमात–धर्म की भावना प्रबल होगी।

भारतीय संविधान ने तो एक ही नागरिकता मानी है, वह है भारतीय नागरिकता। वह धर्म पर आधारित नहीं है। प्रदेश, जाति पर भी आधारित नहीं है सविंधान तो यह भी मानता है कि केवल धर्म, जाति, लिंग या इनम से किसी का आधार नागरिकता का अधिष्ठान नहीं रहेगा। कोई ऐसी धर्म पर

आधारित राजनीतिक पार्टी स्थापित करेगा, तो उसे चुनाव आयोग, मान्यता नहीं दे सकेगा। इस फिरकापरस्ती को रोकने के लिए मुसलमानों को कुछ परहेज, कुछ पाबंदियां मान्य करनी होगी।

जो भारत को अपनी मात्भूमि मानता है, भारत से विशेष प्रेम करता है और अन्य देशों में बसने वाले स्वधर्मियों की अपेक्षा भारत में रहने वाले अन्य धर्मीय नागरिकों को अपने प्रेम और सेवा का सबसे प्रथम और विशेष अधिकारी मानता है, वह इस राष्ट्र का घटक है, वही भारतीय है। मुसलमानों का एक अलग धर्म है, इसलिए उनकी राजनीतिक पार्टी अलग बने, इसका मतलब है कि मुसलमान और मुसलमानेत्तर साथ–साथ एक पार्टी में नहीं रह सकते, मतलब दो धर्मो के लोगों का समान नागरिक की भूमिका में एक साथ रहना संभव नहीं है, यह मानना। इसके आगे का कदम है कि दोनों धर्मो के लोग एक राष्ट्र में भी साथ नहीं रह सकेंगे।

मुसलमान तो कहता है कि उसका धर्म लोकतंत्र पर आधारित है, फिर शिया शुत्री तो छोड़ दीजिए, परधर्मी 'काफिर' है, वह हमारे हित की रक्षा नहीं कर सकता, यह भावना कैसे पनप रही है ? जो मौलाबी अपने अनुयायियों को अन्य धर्मियों से दूर रखकर स्वतंत्र पार्टी बनाने की बात कहता है वह 'धार्मिक' नहीं हो सकता। वह धर्म द्वेष फैलाता है। इसी के कारण दो पार्टियों के बीच दंगे होते है हिन्दू का बनाया हुआ माल हिन्द् नहीं खरीदता दंगो को, गुण्डागर्दी को धर्म का रक्षण मिल रहा है। फिर हिन्दु उसकी बस्तियों में और मुसलमान मोमीनपुरा में रहने जाते हैं। एक दूसरे के बारे में अविश्वास और डर पैदा होता है। हर गॉव, देहात में पाकिस्तान और हिन्दुस्तान स्थापित होते हैं। इसके आगे का कदम है – परधर्मीय स्त्री पर का प्रस्तिका गृह से उठाकर भाले की नोक पर झेलना, सम्पत्ति लूटना, यह भी धर्मकृत्य माना जाता है। विदर्भ में एक कथन है कि पाड़े की टक्कर में कौन–सा जीतता है, उनका कोई मतलब नहीं, लेकिन जिस खेत में टक्कर होती है वह खेत तो नष्ट हो जाता है इन दो धर्मो की टक्कर में भारत भूमि और राष्ट्र नष्ट–भ्रष्ट होंगे रही यक्ष प्रश्न है।

अन्य भारतीय धार्मिक समाजों में ध्वज वदन, राष्ट्रगान सामान्य नियम है। तो मुस्लिम संस्था समाज और मोहल्लो में उससे परहेज क्यों हैं ? इसका जवाब देना जरूरी है। वरना लोग नियत पर शक करते ही रहेंगे। भारतीय नागरिक का मूल कर्तव्य है कि वह ऐसी प्रथाओं का त्याग करें जो स्त्रियों के सम्मान के विरूद्ध है। क्या जबानी तलाक और चार बीबियों वाला धर्म का प्रावधान स्त्रियों के सम्मान के विरूद्ध नहीं हैं ? संवैधानिक कर्तव्यों का विचार व्यक्तिगत, धार्मिक प्रावधानों के आधार पर नहीं हो सकता। संविधान का पालन करना, उसके आदर्शो का सम्मान करना, यह नागरिक का कर्तव्य है, इसलिए लिंग–भेद के आधार पर चल रही इन प्रथाओं का त्याग तो करना ही होगा। व्यक्तिगत कानून 'शरीयत' या धर्म 'श्रेष्ठ है, यह मानना भी गलत है, क्योंकि भारतीय नागरिक के लिए संविधान सर्वश्रेष्ठ और 'सार्वभौम' है यह मान्य करना ही होगा। संसद का कानून बनाने का अधिकार परम श्रेष्ठ और सार्वभौम है, तो कानून का अर्थ लगाने का अधिकार न्यायालयों का है, कानून के राज्य का संकल्पना संविधान का मूलाधार है बसिक स्ट्रक्चर है। आज तो धर्मान्ध हिन्दु और मुसलमान दोनों कानून का राज भी नहीं चाहते। न्यायालय के अधिकार अमान्य कर रहे हैं और न्यायालय का निर्णय हमारे पक्ष में होता तो मानगे ऐसी भाषा है, मानो न्यायालय पर मेहरबानी कर रहे हैं। न्यायालय तो संविधान की स्वतंत्र और आदर्श संस्था है। निष्पक्ष, निर्वेर और निर्भय न्याय संस्था संविधान और लोकतन्त्र की बुनियाद है, प्राणत्व है। यह भी मान्य नहीं होगा तो फिर लोकतन्त्र नष्ट भ्रष्ट हो जायेगा।

नागरिकों के लिए एक समान सिविल संहिता हो, यह तत्व समता, धर्मनिरपेक्षता, लिंग– समानता पर आधारित है। इसका धर्म से कोई संबंध है। विधि के समक्ष सारे समान है, धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर कोई भेद न हो, यह उसका अधिष्ठान है। फिर इसका विरोध क्यों ? यह सच है कि अगर ऐसी समान सिविल संहिता बनेगा तो उसका हिन्दु भी विरोध करेंगे। हिन्दु कोड क समय यही देखा गया है। आज मुसलमान विरोध कर रहे हैं, इसलिए अलग भूमिका ले रहा है। अनुवांशिक सम्पति में जन्म से ही लड़की को लड़के के बराबर, समान अधिकार दिया गया तो भी विरोध हुआ। गोवा में आज पति–पत्नी को एक दूसरे की कमाई में सम्पत्ति में परस्पर समान अधिकार है, जो छीना नहीं जा सकता। यह प्रावधान समान

सिविल संहिता में शरीक करना ही होगा, तब विरोध होगा ही। लेकिन शरीयत के आधार पर समान संहिता का विरोध करना गलत है। कानून का अधिष्ठान मानवीय निरूपाधिक सम्बन्ध है। स्त्री–पुरूष समता के खिलाफ जो प्रावधान होंगे, प्रथाएं होगी, त्याग तो करना ही पड़ेगा। यह प्रश्न धार्मिक नहीं, मानवीय है। आज मुल्ला मौलबी के अधिकार के कारण मुसलमानों में स्वतंत्र विचार नहीं पनप रहा है। वह सुधारवादी या समतावादी नहीं बन रहा है। वे स्त्री शिक्षा के साथ ही सभी तरह के शिक्षण से वचित है। विज्ञान के साथ ,जागतीकरण के साथ उसकी मानसिकता बदलनी चाहिए। स्त्रियों को शिक्षा नौकरी, व्यापार आदि सारे क्षेत्रों में समान अधिकार मिले, यह तो हर एक को मानना ही होगा। इसके खिलाफ जो प्रावधान होगे वे अधार्मिक है और उससे अधिक अमानवीय है। क्या संविधान के तत्वों, प्रावधानों और संस्थाओं की अपेक्षा मुल्ला मौलवी, 'धर्मोचार्य ही परमश्रेष्ठ और सार्वभौम माने जायेगें ? क्या 'धर्मवाद' राष्ट्रवाद से श्रेष्ठ होगा ? आज तो जात जमातवाद , बहुराज्यवाद, सम्प्रदायवाद भारतीयता पर हावी हो रही है। देश से प्रदेश बड़े हो रहें है और प्रादेशिकता राष्ट्रीयता का गला घोंट रही है। इसे रोकना होगा। राष्ट्रीयता का मुख्य लक्षण सिर्फ पड़ास में रहना नहीं है, साथ रहना और सोहरत भी है। केवल एक दूसरे के साथ रहने की तैयारी काफी नहीं एक दूसरे के साथ रहने की आकांक्षा और इच्छा भी है। भिन्न धर्मीय साथ नहीं एक दूसरे के साथ रहने की आकांक्षा और इच्छा भी है। भिन्न धर्मीय साथ नहीं जी सके, यह तो हमारी वेदना है।

अब बुखारी साहब राजनीतिक पार्टी में भी नहीं रहेंगे, ऐसी घोषणा कर रहें है। इसके खिलाफ पढ़े–लिखे, सज्जन मुसलमान आवाज नहीं उठायेंगे, इस घोषणा का विरोध नहीं करेगें तो उनकी नीयत को लोग शक की निगाह से देखेंगे। जब आवाज उठाने की जरूरत होती ह तब तो चुप्पी रखते है वे सज्जन नहीं होते, डरपोक होते है वे भूल जाते है कि दुर्जन, धर्मान्ध, गुण्डे और दुर्जनों के दुष्कर्मो से भी उनका यह मौन ज्यादा धोखादायक, खतरनाक है। क्योंकि 'मौन समति लक्षणम' होता है। निष्क्रिय सज्जन सक्रिय दुजनों को अप्रत्यक्ष रूप से शक्ति प्रदान करते है।। हम तो सिर्फ इतना ही कह सकते है– सबको सनमति दे भगवान !

आदरणीय श्री धर्माधिकारी जी,

आपने इस लेख के माध्यम से समान नागरिक संहिता का पक्ष खुलकर रखा है। धर्म, जाति, भाषा, क्षेत्रीयता उम्र, लिंग तथा अर्थिक स्थिति के आधार पर समाज में वर्ग खड़े करके वर्ग विद्वेष इस तरह बढ़ाना कि वह वर्ग संघर्ष का रूप ले ले यह सामान्य प्रवृत्ति बन गई ह। भारतीय मुसलमान पुरी तरह एक वर्ग का रूप ग्रहण कर चुका है। यह बात पूरी तरह प्रमाणित हो चुकी है कि मुसलमान व्यक्तिगत मामलों में तो बिल्कुल ठीक ठाक है किन्तु धार्मिक मामलों में तुरन्त ही एक संगठन का रूप ले लेता है। आपने बिल्कुल नपे तुले शब्दों में मुसलमानों को सच्चाई से अवगत कराने का प्रयास किया है।

आपने साम्प्रदायिकता तथा समान नागरिक संहिता के विषय में जो कुछ लिखा उससे मैं सहमत हूँ। किन्तु मेरे विचार में राष्ट्र से भी बडा समाज होता है। राष्ट्र तो समाज की सुचारू व्यवस्था के लिए बनाया गया समाज का टुकड़ा है। साम्प्रदायिकता, अथवा किसी भी आधार पर बने संगठन राष्ट्र को क्षति पहुँचाते ही है उससे भी अधिक ये समाज को तोडते है, कमजोर करते है। आपके विचार यदि राष्ट्रवाद से भी थोड़ा उपर उठकर समाज की क्षति की ओर इशारा करते तो अधिक अच्छा होता। फिर भी आपने वर्तमान धर्मनिरपेक्षता को पुनः पटरी पर लाने का प्रयास किया इसके लिए इसके लिए आपको हम बधाई देतें हैं।

आपका
बजरंगलाल